ये रटंत शालाएं और प्रवेश परीक्षाएं

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

हैदराबाद में हाल में एक नया रुझान देखने में आया है। एक 'रटंत शाला', जिसका दावा है कि आई.आई.टी. व अन्य प्रतिस्पर्धी प्रवेश परीक्षाओं में उसके नतीजे सर्वोत्तम हैं, एक कदम और आगे बढ़ गई है। उसने नियमित आवासीय तैयारी स्कूलों की एक ृंखला शुरू की है। इन स्कूलों में 11 वर्षीय बच्चों को कक्षा 6 में प्रवेश दिया जाएगा और 12वीं तक पढ़ाया जाएगा (जैसा कि किसी भी अन्य स्कूल में होता है)। मगर इसके साथ ही इन छात्रों को लगातार सात साल तक संयुक्त प्रवेश परीक्षा (जे.ई.ई.) के लिए तैयार किया जाएगा। योजना है कि आंध्र प्रदेश में एक दर्ज़न ऐसे स्कूल जगह-जगह खोले जाएंगे।

स्कूल के अध्यक्ष का कहना है, "छात्र दो साल तक दिन में 18 घण्टे अध्ययन करे, तो भी आई.आई.टी. में प्रवेश पाना मुश्किल होता है। मगर यदि कक्षा 6 से ही उस सिलेबस को अपनाया जाए तो बात अलग हो जाती है।" इन ओलंपिकनुमा तैयारी शालाओं की वार्षिक फीस 74,000 रुपए है, जिसमें होस्टल व भोजन का खर्च शामिल है। कक्षाएं सुबह 8 से शाम 7 तक चलती हैं।

आखिर क्यों ढेर सारे माता-पिता लाखों रुपए खर्च करके अपने बच्चों को प्राथमिक शाला के फौरन बाद इन 'रटंत शालाओं' में दाखिल करना चाहेंगे? इस सवाल का जवाब ढूंढने कहीं दूर जाने की ज़रूरत नहीं है। भारतीय मध्यम वर्ग के मन में यह विश्वास घर कर चुका है कि यदि बच्चा आई.आई.टी., मेडिकल या मेनेजमेंट जैसे'व्यावसायिक संस्थानों' में दाखिल हो जाए, तो भविष्य सुनहरा होता है।

एक मेडिकल कॉलेज डीन का कहना है, "सारी व्यावसायिक शिक्षा मध्यम वर्ग द्वारा दी व ली जाती है।" इसलिए यह भविष्यवाणी भी किसी पेचीदा विश्लेषण की मोहताज नहीं है कि मेडिकल व मेनेजमेंट की प्रवेश परीक्षाओं के लिए ऐसी 'रटंत शालाएं' बढ़ती संख्या में खुलेंगी और फलेंगी-फूलेंगी। मगर बच्चों का क्या होगा? एक मिनट बच्चों के बारे में भी सोचिए। वैसे भी शहरी स्कूलों की स्थिति को देखते हुए स्पष्ट है कि आज भी बच्चे के पास अपने लिए कोई वक्त नहीं है।

खेलकूद, कला, भाषा, साहित्य या सिर्फ अपने हमउम्र साथियों के साथ आवारागर्दी और मस्ती वगैरह के लिए बहुत ही थोड़ा समय बचता है। टीवी और फिल्में ही एकमात्र मन बहलाव के साधन हैं (और यह भी क्या खूब मन बहलाव है)। कक्षा 11 का एक सामान्य शहरी छात्र रटंत शाला में कोचिंग सुबह 4 बजे शुरू करता है और वहां 3 घण्टे लगाता है। इसके बाद वह घर लौटता है और स्कूल के लिए चल पड़ता है। वहां वह 5 बजे शाम तक रहता है। इसके बाद गृहकार्य होता है। कुल मिलाकर प्रतिदिन 18 घण्टे का शिक्षा कार्य होता है।

आखिर क्यों? क्योंकि यह भावना दिमाग में बैठ गई है कि सिर्फ मेडिकल या इंजीनियरिंग से ही बढ़िया आमदनी और अच्छी गुणवत्ता का जीवन हासिल किया जा सकता है। विज्ञान तो दूसरे नंबर की पसंद है जबकि बी.ए. करना तो हारे हुए लोगों का काम है। इस भावना से मुकाबला करना और इसे दूर करना आवश्यक है।

यह पृष्ठभूमि है जिसके तहत लोग पूछने लगे हैं कि जे.ई.ई. और इस तरह की अन्य परीक्षाओं से क्या हासिल होता है। क्या ये परीक्षाएं ज़रूरी हैं?

यह तो माना जा सकता है कि संस्थाओं को एक छननी की ज़रूरत है जिसकी मदद से वे दो लाख उम्मीदवारों में से 5000 को छांट सकें और संयुक्त प्रवेश परीक्षा एक जांचा परखा तरीका है। मगर पिछले वर्षों में यह प्रणाली पटरी से उतर गई है और रटंत शालाओं के लिए सोने का अंडा देने वाली मुर्गी बन गई है।

जैसे अभी हाल तक जे.ई.ई. का पैटर्न नहीं बदला था; रटंत शालाएं इस पैटर्न को पहचानने और छात्रों को यह पैटर्न पहचानकर परीक्षा में तेज़ी से जवाब देने का प्रशिक्षण देने में विशेषज्ञ हो चुकी थीं। सवाल यह भी है कि ये परीक्षाएं किस चीज़ का मूल्यांकन करती हैं।

काफी समय से यह एहसास रहा है कि शहरी बच्चे (वही मध्यम वर्ग) ग्रामीण बच्चों की अपेक्षा लाभ की स्थिति में रहते हैं। इस एहसास का आकलन किसी समाज वैज्ञानिक से करवाना निहायत उपयोगी रहेगा।

मगर कुछ परेशान करने वाले सवाल पूछे जा रहे हैं। जैसेः जिस छात्र को 450वीं रैंक मिलती है क्या वह 500वीं रैंक वाले छात्र से ज़्यादा बुद्धिमान है? क्या यह 100 मीटर की दौड़ है जहां इतने बारीक अंतरों से फर्क पड़ता है? क्या ये परीक्षाएं अचयनित छात्रों (व उनके परिवारों) में हीन भावना नहीं भर देती हैं? क्या ये भलाई की बजाय नुकसान ज़्यादा करती हैं? क्या इस बात के निर्णय के लिए आंकड़े उपलब्ध हैं।

विकल्पः एक वैकल्पिक मॉडल के तहत बिट्स (पिलानी) प्रवेश परीक्षा को न अपनाते हुए उन छात्रों का चयन करता है जिनका हाई स्कूल परीक्षा में अच्छा प्रदर्शन रहा हो। सी.बी.एस.ई., आई.एस.सी. और विभिन्न राज्यों के बोर्ड्स के प्राप्तांकों की तुलना करने के लिए उन्होंने नॉर्मेलाइज़ेशन की एक विधि भी अपनाई है। अभी हाल में उन्होंने एक ऑनलाइन परीक्षा भी शुरू की है। छात्र इसे जब चाहें कर सकते हैं। वर्षों का अनुभव बताता है कि बिट्स की प्रणाली आई.आई.टी. प्रणाली के बराबर ही कारगर रही है। दोनों के छात्रों का प्रदर्शन एक-सा रहा है।

लिहाज़ा एक आवाज़ उठ रही है कि जे.ई.ई. और इस तरह की अन्य प्रवेश परीक्षाओं को समाप्त किया जाए।

यदि हम हाई स्कूल के प्राप्तांकों के आधार पर चलें (और ज़रूरी हो, तो अधिक से अधिक एक ऑन-लाइन अभिरुचि परीक्षण जोड़ दें, जिसे छात्र जितनी बार चाहे कर सकें) तो क्या स्थिति होगी? क्या मेडिकल संस्थाओं और आई.आई.टी. का स्तर गिर जाएगा? मुझे नहीं लगता कि ऐसा होगा। प्रसंगवश बता दूं कि तमिलनाडु ने सामान्य प्रवेश परीक्षा को समाप्त कर दिया है और एक भूतपूर्व आई.आई.टी. डॉन व वर्तमान में एक आई.आई.टी. के अध्यक्ष प्रोफेसर एम. आनंदकृष्णन बताते हैं कि इससे कोई नुकसान नहीं हुआ है।

ज़ाहिर है, यदि प्रवेश परीक्षाएं समाप्त की गईं तो रटंत शाला लॉबी विरोध करेगी। वे राजनैतिक दबाव बनाएंगी और मंत्रालय शायद 'पुनर्विचार' की सलाह दे। मगर यह कदम युवा मस्तिष्कों और शरीरों को इस जानलेवा परंपरा के मरुस्थल से मुक्त करेगा और उन्हें मशीन से मानव बनाने में मददगार होगा।

इसी संदर्भ में यह सवाल भी पूछा जाना चाहिए कि क्या सूचना टेक्नॉलॉजी, चिकित्सा और मेनेजमेंट ही सफल कैरीयर के रास्ते बच गए हैं? यह तो सही है कि इनमें पैसा अच्छा है, मगर कहावत है कि 'मनुष्य पैसे खाकर ज़िन्दा नहीं रहता'। क्या ये कैरीयर चुनौतियां पेश करते हैं, सृजनात्मकता के लिए जगह देते हैं, क्या संतोष का एहसास देते हैं? यदि सबसे ऊपर वाले लोगों को छोड़ दें, तो ये जॉब काफी ढर्रेनुमा, उबाऊ हो सकते हैं।

दूसरी ओर वैज्ञानिक शोध में कैरीयर पर एक नज़र डालिए। अपने कैरीयर की शुरुआत से ही शोधकर्ता अपनी पसंद के विषय पर काम करते हैं, उसे अपने तरीके से ढालते हैं और समाधान की तलाश करते हैं। और तनखा भी बहुत कम नहीं होती।

कई मायनों में यह कैरीयर किसी कलाकार या संगीतज्ञ के कैरीयर के नज़दीक बैठता है। सृजन के अवसर तो इसमें निहित ही हैं। आप दुनिया भर के शोधकर्ताओं के साथ बराबरी से संवाद करते हैं। आप दुनिया भर में घूमते हैं, अपने काम की बातें करते हैं, अन्य लोगों के काम को जानने के प्रयास करते हैं। और यह सब मुफ्त में या बहुत थोड़े से पैसे से करते हैं। आप युवाओं का मार्गदर्शन करते हैं, चुनौतियों का सामना करते हैं और इस तरह से सदा युवा महसूस करते हैं।

सूचना टेक्नॉलॉजी वाले और डॉक्टर भी अपने काम के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान में नई-नई तरक्की पर निर्भर करते हैं। मैं आग्रह करूंगा कि आप यह किताब ज़रूर पढ़ें: *100 रीज़न्स टु बी ए साइन्टिस्ट*। इसे http://users.ictp.it/krs/100reasons.pdf से मुफ्त में डाउनलोड कर सकते हैं। इसमें कई वैज्ञानिक बताते हैं कि उन्होंने विज्ञान का विकल्प क्यों चुना और कैसे इसने उनको समृद्ध व संतुष्ट किया है। ***(स्रोत फीचर्स)***